अध्याय 4

सामाजिक सुधार और धार्मिक पुनर्जागरण

भारतीय धर्म, समाज एवं संस्कृति प्राचीन काल से ही अत्यधिक सुदृढ़, समृद्ध एवं गौरवपूर्ण रही है। अनेक विदेशी आक्रमणकारियों ने भारत पर आक्रमण किये जब–जब भी भारत पर विदेशी आक्रमण हुए या विदेशियों का शासन रहा, भारतीय संस्कृति व धर्म को बहुत ही आघात पहुँचा लेकिन हमारी संस्कृति का स्वरूप इन आक्रमणों के बाद भी अक्षुण्ण बना रहा है। इस काल में उत्पन्न अव्यवस्था के कारण जब–जब भी भारतीय धर्म एवं समाज में रूढ़िवाद, आडम्बर, सामाजिक बुराइयां आदि प्रवेश करने लगी, तब–तब समाज और धर्म सुधार नायकों ने एक आन्दोलन के रूप में उन बुराइयों को दूर करने का संदेश समाज को दिया, चाहे वह मध्यकाल का भक्ति आन्दोलन हो या 19वीं शताब्दी का सामाजिक व धार्मिक पुनर्जागरण ।

भक्ति आन्दोलन –

भारत में भक्ति की एक लम्बी व सुदृढ़ परम्परा रही हैं। भक्ति की शुरूआत मध्यकाल में सर्वप्रथम दक्षिण भारत से हुई और इसमें विष्णु के उपासक सन्तों की महत्वपूर्ण भूमिका रही। भारत में मध्यकाल व पूर्व मध्यकाल में भक्ति के तीन प्रमुख मत अस्तित्व में थे–

1. शैवमत
2. वैष्णवमत
3. सूफीमत

शैव मत–

शिव के उपासक शैव कहलाते थे। एक समय था जब हिन्दू धर्म में शैवमत सर्वाधिक प्रबल था। पाल, सेन व चन्देल राजाओं के अभिलेखों में ''ओम नमः शिवाय'' से प्रार्थना प्रारम्भ होती है। दक्षिण में शैव के अनुयायियों को नयनार कहा जाता था, जिनकी संख्या 63 थी। 12वीं शताब्दी में दक्षिण भारत में वीर शैव मत की शुरूआत हुई। इसके अनुयायी लिंगायत कहलाते थे। ये अहिंसा में विश्वास रखते थे। हिन्दू धर्म आन्दोलन के नेतृत्व में शंकराचार्य का नाम विशेष उल्लेखनीय है, जिन्होंने बद्रीनाथ, पुरी, द्वारिका व श्रृंगेरी (मैसूर) में चार मठ स्थापित किये। कालान्तर में शैवमत–वीरशैव, पाशुपत, कापालिक आदि सम्प्रदायों में विभाजित हो गया।

वैष्णव मत–

मध्यकालीन भारत में वैष्णव मत काफी लोकप्रिय था। भगवान विष्णु के उपासक वैष्णव तथा विष्णु के अनुयायी दक्षिण भारत में आलवार कहलाते थे। इनकी संख्या 12 थी। आलवार संतो ने दक्षिण भारत में भक्ति के सिद्धान्त का अधिक प्रचार किया। ये सन्त यद्यपि सामान्य वर्ग से सम्बन्धित थे, लेकिन इनमें उच्च गुणों का समावेश था। इनकी शिक्षाओं में कर्मज्ञान व भक्ति का सम्मिश्रण था। ये सगुण भक्ति के उपासक थे। इन्होंने तमिल भाषा में साहित्य की रचना की। बाद में भक्ति आन्दोलन का प्रसार उत्तरी भारत में भी हुआ, जिसे आगे बढ़ाने में रामानन्द, वल्लभाचार्य, मध्वाचार्य निम्बार्काचार्य, रामानुजाचार्य तथा चैतन्य महाप्रभु आदि प्रमुख है। राजस्थान में भी वैष्णव सम्प्रदायों के अन्तर्गत विश्नोई सम्प्रदाय, जसनाथी सम्प्रदाय, रामस्नेही सम्प्रदाय, दादू सम्प्रदाय, निरंजनी सम्प्रदाय, चरणादासी सम्प्रदाय व लालदासी सम्प्रदाय आदि का अभ्युदय व विकास हुआ। ये सभी संत निर्गुण सम्प्रदाय के थे। सामाजिक व धार्मिक पुनर्जागरण में इन सन्तों का भी प्रमुख योगदान रहा।

सूफीमत–

इस्लामिक रहस्यवाद को सूफीवाद कहा जाता है। सूफ का शाब्दिक अर्थ ऊन है। सूफी सन्त ऊन की तरह सफेद वस्त्र का लबादा पहनते थे। इसी से उन्हें सूफी कहा गया। सूफी मत तथा हिन्दू विचारधारा, विश्वास और रीति रिवाजों में काफी समान थी। सूफीयों के अनुसार विभिन्नता में ईश्वर की एकरूपता निहित हैं। सूफीवाद के दो प्रमुख लक्ष्य हैं–परमात्मा से सीधा संवाद और इस्लाम के अनुसार मानवता की सेवा करना। सूफी सम्प्रदायों में चिश्ती सम्प्रदाय, सुहरावर्दी, कादरी एवं नक्शबन्दी सम्प्रदाय प्रमुख थे। प्रमुख सूफी सन्तों में शेख मुईनुद्दीन चिश्ती, शेख हमीदुद्दीन नागौरी, बख्तियार काकी, निजामुद्दीन ओलिया, शेख सलीम, बहाउद्दीन जकारिया, सदुद्दीन आरिफ, सुर्ख बुखारी आदि प्रमुख थे।

मध्यकाल में इन तीनों मतों ने सामाजिक व धार्मिक पुनर्जागरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। आगे चलकर 19वीं एवं 20वीं शताब्दी में भी धार्मिक व समाज सुधार के आन्दोलन आरम्भ हुए। इन आंदोलनों ने भी पुनर्जागरण में उल्लेखनीय भूमिका निभाई। एक ओर इन आन्दोलनों ने भारत की सामाजिक एवं धार्मिक बुराइयों को दूर किया, वहीं दूसरी ओर भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन में इस पुनर्जागरण ने नई जान फूंकी।

सामाजिक एवं धार्मिक पुनर्जागरण के कारण–

1. भारतीय धर्म व समाज धीरे–धीरे कर्मकाण्डों एवं रूढ़िवादिता से ग्रसित होने लगा था। मुस्लिम व ईसाई धर्म प्रचारक इस कमी का लाभ उठाने लगे और भारतीय ईसाइयों एवं मौलवियों से प्रभावित होने लगे, तब हिन्दुओं की आंखें खुली और विचार किया जाने लगा कि ये हिन्दू धर्म की बुराइयों की इस स्थिति पर रोक लगाना जरूरी है। अतः सुधारकों ने भारतीय समाज एवं धर्म में नयी प्रेरणा जागृत की। देशवासियों में हमारे प्राचीन गौरव एवं उत्कृष्ट आदर्शों के प्रति श्रद्धा जागृत की। इससे इस आन्दोलन को बढ़ावा मिला।
2. अंग्रेजी शासन की स्थापना व पाश्चात्य शिक्षा के प्रसार से भारतीयों को पश्चिमी ज्ञान व विचारों के अध्ययन का भी अवसर मिला।
3. ईसाई मिशनरीज की सक्रियता से भारतीयों में तीव्र प्रतिक्रिया हुई तथा अपने समाज व धर्म की बुराइयों को दूर करने व जागृति लाने का प्रयास किया।
4. अंग्रेजों द्वारा किए जा रहे भारत के आर्थिक शोषण के कारण भी भारतीयों ने ब्रिटिश आचार–विचार का विरोध किया।
5. तत्कालीन साहित्य एवं समाचार पत्रों ने राष्ट्रीय भावनाओं को उभारने का कार्य किया। इनमें आनन्दमठ, 'संवाद कौमुदी' व मराठी उपन्यास 'शिवाजी' का नाम प्रमुख है।
6. भारत में छापेखाने की शुरूआत होने से सन् 1875 तक देशी भाषाओं एवं अंग्रेजी भाषा के समाचार पत्र–पत्रिकाएं प्रकाशित होने लगीं। इन्होंने भारतीयों को अपनी सामाजिक बुराइयों से अवगत कराया।
7. इस समय यूरोप में भी दार्शनिक व बौद्धिक चिन्तन की लहर चल रही थी। स्वतंत्र चिन्तन एवं तर्कवाद को महत्व दिया जा रहा था। भारतीय विचारकों ने भी इसी पद्धति को अपनाते हुये यूरोप को भारतीय ज्ञान व संस्कृति से परिचित कराया।
8. भारत के गौरवमय अतीत से भी विचारकों को प्रेरणा मिली। कई यूरोपीय विद्वान भी इस अतीत से प्रेरणा लेना चाहते थे। विलियम जोन्स व मैक्समूलर ने कई भारतीय ग्रन्थों का अंग्रेजी में अनुवाद किया।
9. 19वीं शताब्दी के मध्य में बंगाल में बुद्धिजीवियों ने कलकत्ता हिन्दू कॉलेज के माध्यम से लोगों में परिवर्तन की भावना को जन्म दिया। इसमें हिन्दू कॉलेज के यूरोपीय अध्यापक देरिजियो के विचारों का महत्वपूर्ण योगदान रहा।
10. इस समय राजा राममोहनराय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, केशवचन्द सेन, ईश्वरचन्द विद्यासागर, ज्योतिबा फूले आदि समाज सुधारक हुए जिन्होंने भारतीय समाज एवं धर्म में एक नयी चेतना का संचार किया।

प्रमुख समाज सुधारक

(I) ब्रह्म समाज एवं राजा राम मोहन राय–

राजा राममोहनराय

बहुमुखी प्रतिभा के धनी राजा राममोहनराय भारतीय धर्म व समाज सुधार आन्दोलन के अग्रणी पुरूष थे। इन्हें भारतीय राष्ट्रवाद का अग्रदूत भी कहा जाता है। इनका जन्म 22 मई, 1772 को बंगाल के राधानगर गांव में हुआ था।

इन्हें अरबी, संस्कृत, पारसी, बंगला के अलावा लेटिन, ग्रीक, हिब्रू भाषाओं का भी ज्ञान था। इन पर पाश्चात्य विचारों

का काफी प्रभाव था। हिन्दू समाज में प्रचलित अन्ध विश्वास एवं कुप्रथाएं पसंद नहीं थी। उन्होंने इन्हें दूर करने का संदेश दिया। उनका मूर्ति पूजा में विश्वास नहीं था व भारत में ईसाई धर्म के प्रभुत्व को रोकने तथा भारतीय समाज की कुरीतियों से मुक्त कराने के लिए उन्होंने 20 अगस्त, 1828 को 'ब्रह्म समाज' की स्थापना की। ब्रह्म समाज मूल रूप से वेद और उपनिषदों पर आधारित है। ब्रह्म समाज के प्रमुख सिद्धान्त निम्नांकित हैं–

(I) ईश्वर एक है वह सृष्टि का निर्माता, पालक, अनादि, अनन्त, निराकार है।

(ii) ईश्वर की उपासना बिना किसी जाति सम्प्रदाय के अध्यात्मिक रीति से करनी चाहिए।

(iii) पाप कर्म के प्रायश्चित एवं बुरी प्रवृत्तियें के त्याग से ही मुक्ति सम्भव है।

(iv) आत्मा अजर व अमर है। वह ईश्वर के प्रति उत्तरदायी है।

(v) आध्यात्मिक उन्नति के लिए प्रार्थना आवश्यक है।

(vi) ईश्वर के लिए सभी समान हैं और वह सभी की प्रार्थना समान रूप से स्वीकार करता है।

(vii) ब्रह्म समाज कर्मफल के सिद्धान्त में विश्वास करता है।

(viii) सत्य के अन्वेषण में विश्वास रखता है।

ब्रह्म समाज सभी धर्मों के प्रति सहनशील था। ब्रह्म समाज की स्थापना के समय ही यह स्पष्ट कर दिया था कि सभी लोग बिना किसी भेदभाव के शाश्वत सत्ता की स्थापना के लिए इसका प्रयोग कर सकते हैं। इसमें न किसी की मूर्ति स्थापित होगी, न कोई बलि होगी और न ही किसी धर्म की निन्दा की जायेगी।

राजा राममोहनराय को अपनी भाभी के सती होते देखकर सती प्रथा के विरोध की प्रेरणा मिली और उन्होंने विलियम बेटिंक से 1829 ई. में सती प्रथा विरोधी कानून बनवाकर इस प्रथा को गैरकानूनी घोषित करवाया। इसके अलावा राजा राममोहनराय ने बाल विवाह, बहु विवाह, छुआछूत, नशा आदि कुप्रथाओं का भी विरोध किया। वे पाश्चात्य ज्ञान व शिक्षा के अध्ययन को भी भारत के विकास और प्रगति के लिए आवश्यक मानते थे।

उन्होंने कोलकाता में वेदान्त कॉलेज, इंगलिश स्कूल और हिन्दू कॉलेज की स्थापना की। उन्होंने बंगला में संवाद कौमुदी, पारसी में मिरातुल अखबार व अंग्रेजी भाषा में ब्रह्मनीकल पत्रिका प्रकाशित की।

1833 ई. में इंगलैण्ड के ब्रिस्टल नगर में राजा राममोहन राय की मृत्यु हो गई। राजाराममोहन राय की मृत्यु के बाद देवेन्द्रनाथ टैगोर और केशव चन्द सेन ने इस संस्था को आगे बढ़ाया। बाद में ब्रह्म समाज दो भागों में विभाजित हो गया– आदि ब्रह्म समाज एवं भारतीय ब्रह्म समाज। ब्रह्म समाज के प्रभाव से सन् 1867 में आत्माराम पाण्डुरंग ने प्रार्थना समाज की स्थापना की जिसे बाद में महादेव गोविन्द रानाडे ने इसे गति दी। सबसे पहले ब्रह्म समाज ने ही इन सुधारों की शुरूआत की, इसीलिए राजाराम मोहनराय को नये युग का अग्रदूत भी कहा जाता है।

(ii) स्वामी दयानन्द सरस्वती एवं आर्य समाज–

स्वामी दयानन्द सरस्वती

ब्रह्म समाज की तरह ही आर्य समाज ने भी राष्ट्रीय स्तर पर धर्म एवं समाज सुधार का बीड़ा उठाया। आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती थे, जिनका जन्म गुजरात के मौरवी प्रान्त के टंकारा जिले में 1824 ई में एक ब्राह्मण रूढ़िवादी परिवार में हुआ था। स्वामी दयानन्द सरस्वती का बचपन का नाम मूलशंकर था।

एक दिन उन्होंने मन्दिर में एक चूहे को शिवलिंग पर चढ़कर प्रसाद खाते हुये देखा तो इनका मूर्ति पूजा से विश्वास उठ गया। 21 वर्ष की आयु में उन्होंने घर छोड़ दिया जौर मथुरा में स्वामी विरजानन्दजी को अपना गुरू बनाया। उनसे स्वामी दयानन्द सरस्वती ने वेदों की शिक्षा प्राप्त की। गुरू ने उनको कहा 'जीओ और वेदों को पढ़ाओ'। वे प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किया और स्वराज को अपने कार्य का आधार बनाया। 1864 ई. से स्वामी जी ने सार्वजनिक उपदेश देना आरम्भ किया। स्वामीजी का उद्देश्य

हिन्दू समाज व धर्म की बुराइयों को दूर करना था। उनकी प्राचीन वैदिक सभ्यता, संस्कृति व धर्म के प्रति अटूट श्रद्धा थी। 1874 ई. में उन्होंने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' की उदयपुर प्रवास के समय रचना की तथा 10 अप्रेल, 1875 में उन्होंने आर्य समाज की स्थापना की। आर्य समाज के सिद्धान्त इस प्रकार है:–

1. वेदों की सत्यता पर बल।
2. वैदिक रीति से हवन व मंत्र पाठ करना।
3. सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने पर बल दिया।
4. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी वाहिये।
5. पौराणिक विश्वासों, मूर्तिपूजा और अवतारवाद का विरोध करना।
6. स्त्री शिक्षा तथा विधवा पुर्नविवाह को प्रोत्साहन देना।
7. ईश्वर सर्वशक्तिमान, निराकार व नित्य है।
8. सभी से धर्मानुसार प्रीतिपूर्वक यथा योग्य व्यवहार करने पर बल दिया।
9. हिन्दी व संस्कृत भाषा के महत्व एवं प्रसार में वृद्धि करना।
10. सब की उन्नति में अपनी उन्नति और सबकी भलाई में अपनी भलाई समझना।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने समाज में व्याप्त कुरीतियों की आलोचना की और उन्हें दूर करने के लिए जन समर्थन जुटाया। उन्होंने छुआछूत, बाल विवाह, कन्या वध, पर्दा प्रथा, मूर्ति पूजा, श्राद्ध, धार्मिक अन्धविश्वास एवं रूढ़ियों का विरोध किया। स्त्री शिक्षा एवं स्त्री अधिकारों का समर्थन किया। उन्होंने कहा वेदों के अध्ययन का अधिकार स्त्रियों को भी पुरूषों के बराबर है। आर्य समाज शुद्धि आन्दोलन में विश्वास रखते थे। विशेष परिस्थितिवश अन्य धर्म स्वीकार करने वाले हिन्दुओं का वैदिक रीति से शुद्धिकरण कर पुनः हिन्दू धर्म में लेने पर जोर दिया।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन को भी आगे बढ़ाया। उन्होंने आजादी प्राप्त करने के लिये ''स्वराज्य'' शब्द का प्रथम बार प्रयोग किया। विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार एवं स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग करना सिखाया। उन्होंने कहा–''स्वराज्य विदेशी राज्य से सदैव अच्छा होता है, चाहे उसमें कितनी ही बुराइयां क्यों न हों ?''

आर्य समाज का शिक्षा के क्षेत्र में भी विशेष योगदान रहा है। आर्य समाज के नाम से विद्यालय, महाविद्यालय एवं गुरूकुल व अन्य संस्थाएं संचालित हैं जिनकी शैक्षिक उन्नयन में महत्वपूर्ण भूमिका है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती के अन्तिम दिन राजस्थान में ही व्यतीत हुए। 30 अक्टूबर 1883 को अजमेर में स्वामी जी का देहावसान हो गया।

(iii) रामकृष्ण मिशन एवं स्वामी विवेकानन्द–

स्वामी विवेकानन्द

स्वामी विवेकानन्द ने भारतीय संस्कृति, धर्म एवं समाज की अच्छाइयों से विश्व को परिचित कराया। स्वामी विवेकानन्द का जन्म 12 जनवरी 1863 ई में बंगाल में विश्वनाथ दत्त के परिवार में हुआ। इनका बचपन का नाम नरेन्द्रनाथ दत्त था। स्वामीजी पर अपनी माता भुवनेश्वरी देवी का विशेष प्रभाव था। भारतीय दर्शन के अध्ययन के साथ ही उन्होंने पश्चिमी विचारों का भी अध्ययन किया। प्रारम्भ से ही अध्यात्म के प्रति उनमें काफी रूचि थी। सन्1881 में विवेकानन्द की दक्षिणेश्वर में उनके गुरू रामकृष्ण परमहंस से भेंट हुई जिन्होंने उनको ईश्वर की अनुभूति करायी, तभी से स्वामीजी रामकृष्ण परमहंस के भक्त हो गये।

स्वामी विवेकानन्द के समक्ष तीन प्रमुख कार्य थे:–

1. उनका पहला कार्य था, धर्म की ऐसी व्याख्या करना जो सर्वमान्य हो।
2. पाश्चात्य शिक्षा के कारण भारतीयों में धर्म के प्रति श्रद्धा कम हो गई थी। इस दृष्टि से हिन्दू धर्म के प्रति हिन्दुओं की श्रद्धा को पुनः स्थापित करना।
3.. हिन्दुओं में आत्म गौरव की भावना विकसित करना।

स्वामीजी ने धर्म की जो व्याख्या की उसका सार था–''धर्म मनुष्य के भीतर निहित देवत्व का विकास है। धर्म न तो पुस्तकों में है और न ही धार्मिक सिद्धान्तों में। वह तो केवल अनुभूति में निवास करता है।''

स्वामी विवेकानन्द ने सन् 1891 से भारत के विभिन्न स्थानों पर भ्रमण किया एवं भारतीयों की निर्धनता एवं दयनीय दशा का प्रत्यक्ष अनुभव किया। आपको 1893 ई में शिकागो (अमेरिका) में विश्व धर्म सम्मेलन में भाग लेने का अवसर मिला।

कई बाधाओं को पार करते हुये स्वामी विवेकानन्द धर्म सम्मेलन में पहुंचे। स्वामीजी ने अपने व्याख्यान में विश्व को अवगत कराया कि विश्व का कोई भी कार्य भारत की सामर्थ्य के बाहर नहीं हैं। बौद्धिक, धार्मिक, चारित्रिक, आध्यात्मिक एवं दार्शनिक दृष्टि से भारत जितना समृद्ध है, उतना विश्व का कोई अन्य देश नहीं है। स्वामीजी ने अपने आत्मीय उद्‌बोधन से लोगों का मन मोह लिया। अगले दिन वहाँ के समाचार पत्र हैरल्ड में उनके बारे में लिखा– ''धर्म की इस महान संसद में विवेकानन्द ही सबसे महान् है। उनका भाषण सुनने के बाद लगता है कि ऐसे ज्ञानी देश (भारत) को सुधारने के लिए विदेशी धर्म प्रचारकों को भेजना कितनी मूर्खता की बात है।''

स्वामी विवेकानन्द वेदान्त दर्शन के अध्येता थे। उनकी मान्यता थी कि वेदान्त हमारे आत्मबल को जाग्रत करता है। स्वामी जी ने अज्ञानता व गरीबी की कठिनाई को दूर करने और अनाथों की सहायता पर जोर दिया। उन्होंने भारत की राष्ट्रीयता का भी पोषण किया और भारत मां की पूजा के लिए प्रेरित किया। युवकों को देश के प्रति समर्पण भाव रखने की प्रेरणा दी।

स्वामी विवेकानन्द ने अपने गुरू रामकृष्ण की शिक्षाओं के व्यापक प्रसार के लिए कोलकाता में बेल्लूर के पास 5 मई 1897 में रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। इसकी शाखाएँ देश विदेश में फैली हुई है। इससे पूर्व 1887 ई. में तारानगर में रामकृष्ण मठ की स्थापना की गई। मठों के माध्यम से रामकृष्ण मिशन का संगठन और प्रचार कार्य स्वामीजी ने प्रारम्भ कर दिया था। लेकिन रामकृष्ण मिशन का वैधानिक स्वरूप उनकी मृत्यु के बाद सन् 1903 से अस्तित्व में आया, जब इसे एक समुदाय के रूप में पंजीकृत करा लिया गया।

रामकृष्ण मिशन भारत के विभिन्न प्रान्तों तथा अमेरिका फीजी, मॉरिशस आदि देशों में शाखाएं है। रामकृष्ण मिशन ऐसे आदर्शों एवं सिद्धान्तों का प्रचार करता है जिसे सभी धर्मों व संस्कृतियों के लोग अपना सकें। मिशन के माध्यम से उपदेश, शिक्षा, चिकित्सा, अकाल, बाढ़, भूकम्प व संक्रामक रोगों से पीड़ितों की सहायता का कार्य भी किया जाता है।

स्वामी विवेकानन्द का मानव सेवा में महत्वपूर्ण स्थान है। वे रूढ़िवादिता, अन्धविश्वास, निर्धनता व अशिक्षा के कटु आलोचक थे। छुआछूत व वर्गभेद को नहीं मानते थे। जन कल्याण की भावना को उन्होंने प्रोत्साहित किया।

(iv) आचार्य तुलसी एवं अणुव्रत आन्दोलन

भारत लम्बी पराधीनता के पश्चात् 15 अगस्त, 1947 को स्वतंत्र हुआ। स्वतंत्रता के स्वर्ण प्रभात से लोगों में नवीन आशाओं का संचार हुआ,लेकिन स्वतंत्रता के इस नव अभ्युदय से जो समाचार आ रहे थे, वे बहुत अधिक चिन्ताजनक थे।

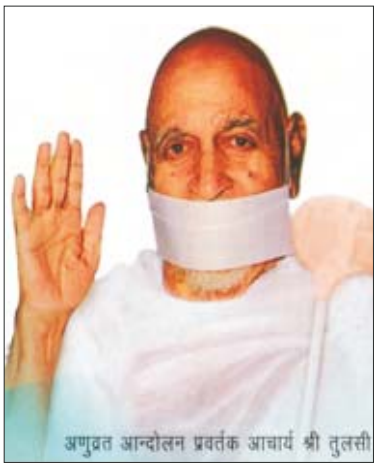
अणुव्रत आन्दोलन प्रवर्तक आचार्य श्री तुलसी

हिंसा, साम्प्रदायिक तनाव, असामाजिक वातावरण और अनैतिकता के बढ़ते हुए दौर को देखकर जैन श्वेताम्बर धर्म के तेरापंथ सम्प्रदाय के नवें आचार्य तुलसी की अन्तरात्मा डोल उठी। उनके मन में एक स्वाभाविक प्रश्न उठा कि क्या हमने इसीलिये आजादी प्राप्त की थी ? स्वाधीनता के आंदोलन के दौर में स्वतंत्रता सेनानियों ने जो स्वप्न देखे थे, क्या वे स्वप्न ही रहेंगे ? लाखों–लाखों भारतीयों ने आजादी प्राप्त करने के लिये क्या–क्या नहीं किया? क्या हिंसा, मारकाट, साम्प्रदायिक तनाव, बलात्कार, भ्रष्टाचार अनैतिक आचरण आदि का यह वातावरण इस देश की स्वतंत्रता को सुरक्षित रख पायेगा ? इस स्थिति को देखकर आचार्य तुलसी ने अपने कर्त्तव्य बोध का अनुभव किया। सोचा , यह चुप रहकर बैठने का समय नहीं है। उनका हृदय जाग उठा। सदियों से प्रताड़ित जड़वादी समाज को बदलने के संकल्प के साथ नई दिशा की ओर बढ़ने के लिए कूच किया।

इस तरह के संकल्प को लेने वाले आचार्य तुलसी जैन धर्म की श्वेताम्बर तेरापंथ परम्परा में नवें आचार्य थे। आचार्य तुलसी का जन्म राजस्थान प्रदेश के नागौर जिले के लाडनूं नामक कस्बे में कार्तिक शुक्ला द्वितीया वि.सं. 1971 को हुआ। इनके पिता का नाम झूमरमल खटेड़(ओसवाल) तथा माता का नाम वदनाजी था।

जब इनकी उम्र 11 वर्ष की थी, तब तेरापंथ के अष्टमाचार्य कालूगणी के कर कमलों से मुनि दीक्षा ग्रहण की। बाईस वर्ष की छोटी आयु में ही वे तेरापंथ धर्म संघ के आचार्य

बन गये। धर्म संघ के माध्यम से आपने कई क्रान्तिकारी कदम उठाये। प्रेक्षाध्यान, जीवन विज्ञान तथा अणुव्रत आंदोलन उन क्रान्तिकारी कदमों में से ही है। आप आशुकवि, उद्‌भट लेखक शोधक, प्रगतिशील विचारों के धनी, समाज सुधारक व रूढ़ियों के प्रबल विरोधी थे। आपका निधन 23 जून, 1997 को गंगाशहर (बीकानेर) में हुआ।

ऐसे क्रांतिचेता आचार्य तुलसी ने स्वतंत्र भारत को नई दिशा देने के लिए जो संकल्प लिया, उसकी घोषणा का सौभाग्य 1 मार्च, 1949 को दस हजार श्रोताओं की उपस्थिति में सरदारशहर (जिला चूरू) को प्राप्त हुआ तथा अणुव्रत विचार क्रांति की यह घोषणा आचार्य तुलसी ने वर्तमान राष्ट्रीय, सामाजिक एवं युगीन परिस्थितियों का विवेचन करते हुए नैतिक शक्ति के नवसंचार के संदर्भ में की और उसमें अणुव्रत की आचार संहिता का महत्व बताते हुए जन–जन को अपने कर्त्तव्य बोध से जाग्रत करने का आह्‌वान किया तथा अणुव्रत के नियमों व व्रतों का वाचन किया। अणुव्रत की इस नियमावली के अनुसार सबकी व्याख्या करते हुए उन्होंने 75 नियमों की जानकारी दी। ये छोटे–छोटे नियम अर्थात् अणु यानि छोटे तथा नियम अर्थात् व्रत की उपादेयता बताई। यह व्याख्या सुनकर तत्काल 71 व्यक्तियों ने अणुव्रती बनने का निश्चय कर अणुव्रती की प्रतिज्ञा ग्रहण की।

अणुव्रत के नियम समाज के सभी व्यक्तियों के लिये यथा–व्यापारी, विद्यार्थी, अध्यापक, एडवोकेट, राजनीतिज्ञ, उद्योगपति, डॉक्टर, इंजीनियर आदि के लिये थे। सबको अपने–अपने कार्यों के अनुरूप आचरण कर समाज में नैतिकता का प्रसार करना इनका मुख्य उद्देश्य था। जैसे– व्यापारी के अणुव्रत में कम नहीं तोलना, मिलावट नहीं करना, जमाखोरी नहीं करना आदि, विद्यार्थी के लिये नकल नहीं करना तथा अध्यापक का सम्मान करना, जैसे नियम सब के लिये थे। अणुव्रत आंदोलन के इस उद्‌घोष की व्यापक प्रतिक्रिया हुई और धीरे–धीरे यह आंदोलन कश्मीर से कन्याकुमारी व राजस्थान से आसाम तक व्याप्त हो गया। तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद व प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू, जयप्रकाशनारायण आदि ने इसकी भूरि–भूरि प्रशंसा की। आचार्य तुलसी इस आंदोलन के प्रणेता व अनुशास्ता के रूप में सम्बोधित किये जाने लगे।

यह अणुव्रत आंदोलन यद्यपि जैन तेरापंथ धर्मसंघ के आचार्य तुलसी द्वारा प्रारम्भ किया गया लेकिन इस आंदोलन की विशेषता यह रही कि यह किसी धर्मसंघ से नहीं जुड़ा। कोई भी व्यक्ति किसी भी धर्म, समाज, जाति का हो वह अणुव्रती बन सकता है। अणुव्रत ने जातिवाद, साम्प्रदायिकता, छूआछूत आदि का विरोध किया। नारी जाति को सम्मान दिया। विशुद्ध रूप से यह देश में नैतिकता के प्रसार व चारित्रिक सुदृढ़ता के विकास का आंदोलन है। मानवतावादी आंदोलन है। इसे युगधर्म या मानव धर्म का पर्यायवाची कह सकते हैं। यह व्यसनमुक्त जीवन जीने की प्रेरणा देता है तथा जीवन में प्रामाणिकता को प्राथमिकता देता है। यह कोई वाद नहीं हैं, धर्म नहीं है, किसी उद्योगपति या राजनेता द्वारा पोषित आंदोलन नहीं है, यह विशुद्ध रूप से मानव कल्याण का अहिंसक आंदोलन है। दबाव से नहीं बल्कि स्वेच्छा से अणुव्रती बनने का आंदोलन है। इस आंदोलन के नियम व्यापारी, उद्योगपति, छात्र, अध्यापक, एडवोकेट, डॉक्टर, इंजीनियर, राजनेता आदि सबके लिये अलग–अलग बने हुए हैं। वे अपनी रूचि के अनुरूप इन्हें अपना सकते हैं। इन सब वर्गों के सब नियमों को मूल रूप में संकलित करते हुए ग्यारह नियमों की एक आचार संहिता निर्धारित की गई वह है–

अणुव्रत आचार संहिताः–

1. मैं किसी भी निरपराध प्राणी का संकल्पपूर्वक वध नहीं करूंगा।
   - आत्म–हत्या नहीं करूंगा।
   - भ्रूण हत्या नहीं करूंगा।
2. मैं आक्रमण नहीं करूंगा।
   - आक्रामक नीति का समर्थन नहीं करूंगा।
   - विश्व शांति तथा निःशस्त्रीकरण के लिए प्रयत्न करूंगा।
3. मैं हिंसात्मक एवं तोड़फोड़मूलक प्रवृत्तियों में भाग नहीं लूंगा।
4. मैं मानवीय एकता में विश्वास करूंगा।
   - जाति, रंग आदि के आधार पर किसी को उच्च या निम्न नहीं मानूंगा।
   - अस्पृश्यता नहीं मानूंगा।
5. मैं धार्मिक सहिष्णुता रखूंगा।
   - साम्प्रदायिक उत्तेजना नहीं फैलाऊंगा।
6. मैं व्यवसाय और व्यवहार में प्रामाणिक रहूंगा।
   - अपने लाभ के लिए दूसरों को हानि नहीं पहुँचाऊँगा।

- छलपूर्ण व्यवहार नहीं करूंगा।

7. मैं ब्रह्मचर्य की साधना और संग्रह की सीमा का निर्धारण करूँगा।
8. मैं चुनाव के संबंध में अनैतिक आचरण नहीं करूँगा।
9. मैं सामाजिक कुरीतियों को प्रश्रय नहीं दूँगा।
10. मैं व्यसनमुक्त जीवन जीऊँगा।
    - मादक तथा नशीले पदार्थों–शराब, गांजा, चरस, हेरोइन, भांग, तम्बाकू आदि का सेवन नहीं करूँगा।
11. मैं पर्यावरण की समस्या के प्रति जागरूक रहूँगा।
    - हरे–भरे वृक्ष नही काटूँगा
    - पानी बिजली आदि का अपव्यय नहीं करूँगा।

अणुव्रती के लिए इन वर्गीय अणुव्रतों का पालन अनिवार्य रखा गया हैं। इन अणुव्रतों की पालना करने वाले पूरे देश में लाखों अणुव्रती भाई हैं जो देश में नैतिकता, शांति, सहअस्तित्व व भाईचारे का प्रसार कर रहे हैं। अणुव्रत के प्रचार–प्रसार के लिये देशभर में अणुव्रत समितियां कार्य कर रही हैं।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु

- 19वीं शताब्दी में धर्म व समाज सुधार आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य भारतीय समाज के धर्म में व्याप्त बुराइयों को दूर करना था।
- विलियम जॉन्स एवं मैक्समूलर ने कई भारतीय ग्रन्थों का अंग्रेजी में अनुवाद किया।
- राजा राममोहनराय भारतीय पुनर्जागरण के अग्रदूत थे।
- सामाजिक व धार्मिक सुधार आन्दोलन ने राष्ट्रीय आन्दोलन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।
- राजा राममोहनराय ने सन् 1828 में ब्रह्म समाज और स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सन् 1875 में आर्य समाज की स्थापना की।
- 1893 ई. के शिकागो विश्वधर्म सम्मेलन में विवेकानन्द को सर्वाधिक महान व्यक्ति बताया।
- 1874 ई. में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने 'सत्यार्थ प्रकाश' की हिन्दी भाषा में उदयपुर में रहते हुए रचना की।
- स्वामी दयानन्द सरस्वती प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने स्वराज शब्द का प्रयोग किया।
- स्वामी दयानन्द सरस्वती का निर्वाण 1883 ई. में अजमेर में हुआ।
- आचार्य तुलसी अणुव्रत आन्दोलन के प्रणेता थे।
- अणुव्रत आन्दोलन नैतिकता का आन्दोलन है, जो किसी धर्म या सम्प्रदाय से जुड़ा हुआ नहीं है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्नः–

1. आर्य समाज की स्थापना किस के द्वारा की गई?
   (अ) राजा राममोहनराय (ब) केशवचन्द सेन
   (स) स्वामी दयानन्द सरस्वती(द) देवेन्द्रनाथ टैगोर
2. 19वीं सदी के भारतीय पुनर्जागरण का अग्रदूत किसको कहा है ?
   (अ)स्वामी विवेकानन्द (ब) स्वामी दयानन्द सरस्वती
   (स) ईश्वरचन्द्र विद्यासागर (द) राजा राममोहनराय
3. संवाद कौमुदी का प्रकाशन किसने किया ?
   (अ) राजा राममोहनराय (ब) स्वामी विवेकानन्द
   (स) रामकृष्ण परमहंस (द) देवेन्द्रनाथ टैगोर
4. ब्रह्म समाज की स्थापना कब की गई ?
   (अ) 1862 में (ब) 1828 में
   (स) 1875 में (द) 1893 में
5. स्वामी दयानन्द सरस्वती के बचपन का नाम था
   (अ) नरेन्द्रनाथ दत्त (ब) मूलशंकर
   (स) जटाशंकर (द) भवानीशंकर
6. अणुव्रत आन्दोलन के प्रणेता हैं–
   (अ) दयानन्द सरस्वती (ब) विवेकानन्द
   (स) केशवचन्द्र सेन (द) आचार्य तुलसी

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. स्वामी विवेकानन्द का जन्म कब हुआ था?
2. स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म कहाँ हुआ था?
3. आदि ब्रह्मसमाज की स्थापना किसने की?
4. स्वामी दयानन्द सरस्वती का देहावसान कहाँ हुआ?
5. सती प्रथा विरोधी कानून कब पारित किया गया?
6. अणुव्रत आन्दोलन किसने शुरू किया ?
7. अणुव्रत का क्या अर्थ है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. शुद्धि आन्दोलन के बारे में आप क्या जानते हैं?
2. रामकृष्ण परमहंस कौन थे?
3. राजाराममोहनराय का राष्ट्रीय आन्दोलन में योगदान बताइये।
4. स्वामी विवेकानन्द की प्रारम्भिक जानकारी दीजिए।
5. आर्य समाज के प्रमुख उद्देश्य बताइये
6. अणुव्रत आन्दोलन क्या है ?
7. ब्रह्म समाज द्वारा किये गये सामाजिक सुधारों का वर्णन कीजिए।
8. स्वामी दयानन्द सरस्वती की राष्ट्रीय आन्दोलन में भूमिका बताइये।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. 19वीं शताब्दी में भारतीय नवजागरण के प्रमुख कारण बताइये।
2. राजाराममोहन राय के जीवन व शिक्षाओं का वर्णन कीजिए।
3. स्वामी दयानन्द सरस्वती के जीवन व सिद्धान्तों का वर्णन कीजिए।
4. अणुव्रत आन्दोलन पर एक निबन्ध लिखिए।
5. भारतीय समाज, धर्म और राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रति स्वामी विवेकानन्द का योगदान बताइये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तर –

1.(स) 2. (द) 3. (अ) 4. (ब) 5. (ब) 6. (द)